International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(2): 233-237

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(2): 233-237
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 22-01-2020
Accepted: 24-02-2020

डॉ० शोभा भारद्वाज
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग (डी०ई०आई०) दयालबाग, आगरा, भारत

Correspondence
डॉ० शोभा भारद्वाज
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग (डी०ई०आई०) दयालबाग, आगरा, भारत

संस्कृत जैन महाकाव्यः एक समीक्षात्मक दृष्टि

डॉ० शोभा भारद्वाज

प्रस्तावना

संस्कृत वाङ्मय में जैन साहित्य अत्यन्त, सरस, विपुल एवं उच्च कोटि का है। विविध प्रतिभा सम्पन्न जैनाचार्यों ने जैन साहित्य को अपनी कालजयी कृतियों से समृद्ध किया है। जैन साहित्य में सर्वप्रथम प्राकृत भाषा में ही रचनाएँ प्राप्त होती हैं। कालान्तर में प्राकृत के अतिरिक्त अपभ्रंश, तमिल, मराठी, कन्नड़, गुजराती और हिन्दी भाषा में भी अनेक कालजयी कृतियों का सृजन जैनाचार्यों द्वारा किया गया है। आचार्य भूतबलि कृत षट्खण्डागम और उस पर 72000 श्लोक प्रमाण वीरसेनाचार्य कृत् टीका है। कषायपाहुड़ पर भी वीरसेनाचार्य एवं जिन सेनाचार्य ने 60000 श्लोक प्रमाण टीका लिखी। षट्खण्डागम का ही अन्तिम खण्ड महाबन्ध कहे जाते हैं। इसकी रचना आचार्य भूतबलि ने की जो 40000 श्लोक प्रमाण है। यह सभी ग्रन्थ कर्म सिद्धान्त का अत्यन्त सूक्ष्म एवं तर्कसंगत वर्णन करते हैं।

आचार्य कुन्दकुन्द (प्रथम शती) द्वारा प्राकृत में रहित अध्यात्म प्रधान समयसार, प्रवचनसार एवं पंचास्तिकाय अति प्रसिद्ध ग्रन्थ है। आचार्य उमास्वामी कृत तत्वार्थ सूत्र (प्रथम शतीं) समन्तभद्र (द्वितीय शती) कृत आप्तमीमांसा एवं रत्नकाण्ड श्रावकाचार प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। छठी शती देवानन्दीकृत सर्वार्धासिद्धि, 7वीं शती आचार्य मानतुंग कृत आदिनाथस्तोत्र (भक्ताभरस्तोत्र), 8वीं शती अकलंक स्वामी कृत सिद्धिविनिश्चय आदि 6 ग्रन्थ, 8वीं शती हरिभद्रसूरि कृत षड्र्शन समुच्चय आदि ग्रन्थ 8वीं शती रविषेणाचार्य कृत पद्मपुराण (9वीं शती) जिनसेनकृत महापुराण एवं पार्श्वाभ्युदय, 10–11 वीं शती सोमदेवकृत यशस्तिलक चम्पू और नीतिकाव्यामृत तथा 12वीं शती आचार्य हेमचन्द्र कृत त्रिषष्ठिशलाकापुरुषचरित, कुमारपाल चरित, हेमशब्दानुशासन आदि, 13वीं शती पं० आज्ञाधरकृत सागर, धर्माकृत आदि बीस ग्रन्थ जैन धर्म, साहित्य एवं दर्शन के श्रेष्ठ ग्रन्थ हैं।

भाषा–शैली एवं विषय की विविधता की दृष्टि से संस्कृत के महाकाव्यों को तीन युगों में विभाजित किया गया है–

1 आदिकाल (ई० पू० दूसरी शती से ई० पू० शती तक)
2 मध्यकाल (दूसरी शती से सातवीं शती तक)
3 उत्तर काल (आठवीं से बारहवीं शती तक)

आदिकालीन महाकाव्यों में रामायण एवं महाभारत महाकाव्य हैं। रामायण अपनी मूल चेतना के अनुरूप आदर्शवादी काव्य है जबकि यथार्थ के कठोर धरातल पर महाभारत की रचना हुई है। इसमें दोनों ही काव्यों में खोये हुए राज्य तथा अधिकारों का पुनः प्राप्ति वर्णित है। एक ओर जहाँ रामायण में यह कार्य जहाँ शालीनता, गरिमा एवं देवत्व का परिचायक है वहीं दूसरी ओर महाभारत में प्रलय एवं विध्वंसात्मकता का प्रदर्शन है। दोनों ही काव्यों में बहुमुखी विविधता इतनी व्याप्त है कि सहज ही इसकी प्रवृत्तियों एवं मौलिकताओं का विश्लेषण संभव नहीं है।

मध्यकालीन साहित्य के अन्तर्गत कालिदास अश्वघोष, माघ, भारवि, बाण इत्यादि कवियों की कालजयी कृतियों का समन्वय है। रघुवंश, कुमारसंभव, बुद्धचरित, सौन्दरनन्द, किरातार्जुनीय, शिशुपालवध इत्यादि कृतियों के माध्यम से संस्कृत साहित्य में अपना अभूतपूर्व योगदान दिया है। इन रचनाओं में कहीं प्रकृति में रमणीयता है तो कहीं विध्वंस, कहीं विरह व्यथा चित्रित है तो कहीं काम–पीड़ा का उल्लेख, कहीं नीति युक्त वचन हैं तो कहीं तर्क संगत वार्ता, कहीं नायिका का कथनीय चित्रण है तो कहीं वातावरण की विनाशलीला का। इस प्रकार समस्त कवियों ने अपनी प्रतिभा से संस्कृत साहित्य को समृद्ध किया है।

उत्तरकाल में संस्कृत साहित्य में भाषा चमत्कार अलङार, छन्द, ध्वन्यात्मकता एवं लाक्षणिकता का अधिक समावेश हो गया है।

हर्षवर्धन, वासुदेव, कविराज, पद्मगुप्त, कल्हण, श्री हर्ष ने राजतरंगिणी, नैषधीयचरितम् इत्यादि कृतियों के माध्यम से संस्कृत साहित्य में महनीय योगदान दिया।

संस्कृत जैन महाकाव्य परम्परा –

संस्कृत जैन महाकाव्य दो सहस्त्र वर्षों की सुदीर्घ परम्परा तक विस्तृत है। जैन कवियों द्वारा रचित महाकाव्य जैन साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान पर स्थित हैं। इन विशाल महाकाव्यों की विवेचना से पूर्व इनके आधारभूत सैद्धान्तिक धरातल को समझना अत्यन्त आवश्यक है। इससे इनके रचना विधान और विषय चयन के प्रति पाठक का एक स्वस्थ्य एवं तटस्थ दृष्टिकोण निर्मित होगा। विषय की दृष्टि से संस्कृत जैन महाकाव्यों का वैशिष्ट्य इस प्रकार है–

- समस्त महाकाव्य चरित्र प्रधान है।
- सभी महाकाव्यों में शान्त अबी रस है।
- इनमें संयम एवं भक्ति चरित्र का प्राधान्य है।
- अधिकांश महाकाव्यों का उपजीव्य पुराण है।
- सभी महाकाव्य के लक्षणों से परिपूर्ण एवं प्रकृति चित्रण इत्यादि से सुशोभित है।
- जैन महाकाव्य पुरुषार्थ के द्वारा व्यक्ति के विकास का परिचायक है।
- इन महाकाव्यों में नायक ईश्वर या देव अथवा ऋषि नहीं है। राजा, सेठ, वीर, धर्मात्मा अथवा साधारण व्यक्ति ही नायक है।
- इन महाकाव्यों में बुद्धि पक्ष अनेकात्मक है और हृदय पक्ष अथवा आचारपक्ष अंहिसात्मक है।

जयोदय

मुनि सागर द्वारा विरचित महाकाव्य 'जयोदय' जैन धर्म एवं दर्शन को प्रस्तुत करने वाला एक दार्शनिक एवं धार्मिक महाकाव्य है। अठ्ठाईस सर्गों के इस महाकाव्य में जयकुमार और सुलोचना की प्रेमकथा का पौराणिक आख्यान उपनिबद्धि है। जयोदय महाकाव्य के कथानक का मूल स्त्रोत श्री जिन सेनाचार्य, श्री गुणभद्राचार्य विरचित महापुराण (आदिपुराण भाग दो) में मिलता है। इसका प्रथम प्रकाशन ब्रह्मचारी सूरजमल ने जयपुर से 1950 में किया। इस महाकाव्य में जयकुमार का परिचय स्वयंवर में राजाओं के एकत्र होने, दासी द्वारा सुलोचना के समक्ष राजाओं का परिचय देने आदि का वर्णन तथा सर्गान्त में कवि परिचय का श्लोक आदि वर्णनों के द्वारा ज्ञान सागर मुनि ने श्री हर्ष के नैषध काव्य की परम्परा में उसे आदर्श मानकर काव्य सर्जना की है ऐसा कहा जा सकता है।

जैन धर्म पर आधारित शान्तरस प्रधान जयोदय महाकाव्य में ङ्गृंबार, वीर तथा भक्ति रस की भी त्रिवेणी प्रवाहित है जो अबी रस शान्त को ही पुष्ट करती है। महाकाव्य का समस्त परम्परागत वैशिष्ट्य इसमें दृष्टिगोचर होता है। साथ ही श्लेष, अन्त्यानुप्रास रूपक, यमक के चमत्कारिक प्रयोग के साथ कवि की विविध शास्त्रविषय व्युत्पत्ति भी परिलक्षित होती है। जयोदय महाकाव्य के प्रत्येक वर्णन में कवि की सूक्ष्म वर्णनाशक्ति, सरलता, वर्णनचातुरी सात्विकता, कल्पनाश्रयता, रसभाव–योजना काव्यकला, छन्दोयोजना तथा युगबोध सभी की एक समन्विति प्रतीत होती है। जयोदय महाकाव्य में मुनि ज्ञान सागर ने अपने हृदय में विद्यमान राष्ट्रप्रेम, राष्टभक्ति तथा राष्ट्रीय चेतना को भी प्रस्फुरित किया है–

सत्कीर्तिरळचति किलाभ्युदयं सुभासा,
स्थानं विनारिमृदुवल्लभराट् तथा सः।
याति प्रसन्नमुखता खलु पद्मराजो
र्निंयाति साम्प्रतमितः सितरुक्समाजः।। जयोदय (18/81)

(प्रभात पक्ष में) अजात शत्रु एवं कोमल प्रकृति वाले मनुष्यों के प्रिय राजन् जयकुमार। इस समय प्रातः काल सूर्यदीप्ति सुन्दर कीर्ति को प्राप्त हो रही है। (राष्ट्र पक्ष में) इस समय (स्वतन्त्र भारत में) सुभाष चन्द्र बोस की उज्ज्वल कीर्ति अभ्युदय को प्राप्त हो रही है। अजातशत्रु तथा कोमल प्रकृति वालों के प्रिय राजा डॉ० राजेन्द्र प्रसाद राष्ट्रपति पद को प्राप्त हो रहे हैं अथवा बिना पत्नी और कोमल स्वभाव वाले सरदार वल्लभ भाई पटेल प्रतिष्ठा को प्राप्त हो रहे हैं। अंग्रेजों का परिवार भारत देश से निकल रहा है।

महाकाव्यों में कवि की वर्णनाशक्ति भी अद्भुत तथा सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्त्व तथा पदार्थ की विश्लेषिणी है। प्रकृति के साथ मानव के साहचर्य को स्थापित करते हुए कवि ने अगाध प्रकृति प्रेम प्रदर्शित किया है –

निस्नेहजीवनतयापि तु दीपकस्य
संशोच्यतामुपगतास्ति दशा प्रशस्य।
संघूर्ण्यमानशिरसः पलितप्रभस्य
यद्वन्मनुष्यवपुषो जरसान्वितस्य।। जयोदय (18/41)

अर्थात् प्रभात की बेला में स्नेहरहित (तेल रहित) होने से हिलती हुई लौ वाला, क्षणिक कान्ति वाला सुन्दर दीप शोचनीय कान्ति को प्राप्त हो रहा है। जैसे प्रेम से रहित जीवन के थोड़ा अवशिष्ट रहने से हिलते हुए सिर वाला, श्वेत बालों बाला, वृद्धावस्था से पीड़ित मनुष्य शोक का विषय हो जाता है।

मुनिज्ञान सागर जी का यह महाकाव्य कलापक्ष एवं भावपक्ष की दृष्टि से समृद्ध है। इस महाकाव्य का कलापक्ष भी भावपक्षानुप्राणित है। श्लेष के माध्यम से कवि की विविध शस्त्र विषयक व्युत्पत्ति भी परिलक्षित होती है।

न वर्णलोपः प्रकृर्तेनं भङ्गः कुतोऽपि न प्रत्ययवत्प्रसङ्गः।
यत्र स्वतो वा गुणवृद्धि सिद्धिः प्राप्ता यदीया पदरीतिऋद्धिम।। जयोदय (1/31)

व्याकरण शास्त्र के सुबन्त–तिङन्त पदों में वर्णों का लोप या प्रकृति में (मूलशब्द में) भङ्ग होता है, प्रत्यय लगाकर गुणवृद्धि हुआ करती है किन्तु राजा जयकुमार के राज्य में ब्राह्मणादि वर्णों का लोप नहीं था।

वीरोदय –

वीरोदय महाकाव्य के अष्टम सर्ग में पिता द्वारा दिए गये नाम का उल्लेख भी प्राप्त होता है–

श्रिया सम्वर्द्धमानन्तमनुक्षणमपि प्रभुम्।
श्री वर्धमाननामाऽयं तस्य चक्रे विशाम्पति।।

इस समय लोक में वृद्धि को प्राप्त हो रही हिंसा, व्यभिचार, अधर्म इत्यादि पर भी विचार विमर्श किया गया है क्योंकि उस समय वह चरम सीमा पर थे–

दुर्मोचमोहस्य हति कृतस्थता केनाऽयुपायेक विदूरता[1]पथात्।
परस्पर प्रेमपुनीत भावना भवेदमीषासितिमेऽस्तिर्चता।।

महावीर के उपदेशों से समस्त मनुष्य जाति का उत्थान हुआ एवं सत्कर्म की प्रेरणा मिली। इस प्रकार वीरोदय महाकाव्य समस्त मनुष्य जाति को कर्म करने की प्रेरणा देता हुआ प्रतिष्ठित है। बाईस सर्गों का यह महाकाव्य भगवान महावीर के त्याग और तपस्यापूर्ण जीवन पर आधारित है। इसका कथानक महापुराण के तृतीय भाग उत्तरपुराण से गृहीत है। इस महाकाव्य में अपनी प्रतिभा से महाकवि ज्ञानसागर ने भिन्न–भिन्न स्थानों पर कथानक में परिवर्तन, किया है एवं काव्य–कला एवं दार्शनिकता का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है। यह महाकाव्य ब्रह्मचर्यव्रत, अंहिसा एवं अपरिग्रह की शिक्षा प्रदान करता है। महाकाव्य की समस्त

विशेषताओं से युक्त यह ग्रन्थ प्रकृति और मानव के चिरसहचरत्व को ऋतुओं के विशेष वर्णन से वर्णित किया है। जयोदय महाकाव्य एक ओर काव्यमर्मज्ञों थे बौद्धिक विलास का साधन है वहीं दूसरी ओर वीरोदय महाकाव्य सहृदयग्राह्य है। वीरोदय का कर्मवाद मनुष्य को सत्कर्म करने की प्रेरणा देता है।

सुदर्शनोदय –

इस महाकाव्य में नौ सर्ग है। इस महाकाव्य में चम्पापुरी के श्रेष्ठी ऋषभदास तथा उनकी पत्नी जिनमति के शुभलक्षणोपित पुत्र सुदर्शन के पुत्र के जन्म से लेकर मोक्ष प्राप्ति तक की समस्त घटनाएं वर्णित है। इस ग्रन्थ का नामकरण नायक के आधार पर किया गया है क्योंकि चम्पापुरी के सेठ सुदर्शन का जीवनवृत्त एवं मोक्ष प्राप्ति का अइ चित्रित है इसीलिए सुदर्शनोदय नाम अत्यन्त सार्थक प्रतीत होता है। इस महाकाव्य में जिनमति एक शुभ मुहूर्त में एक पुत्र को जन्म देती है जिसका नाम सुदर्शन रखा जाता है–

सुतदर्शनतः पुराऽसकौ जिनदेवस्य ययौ सुदर्शनम्।
इत चकार तस्य सुन्दरं सुतरां नाम तदा सुदर्शनम्।।

कालान्तर में एक घटनाक्रम में सुदर्शन वैराग्य धारण करने का निश्चय करते हैं क्योंकि उन्हें ज्ञान हुआ कि प्रत्येक प्राणी को कर्मों के अनुसार ही सुख और दुःख की प्राप्ति होती है इसीलिए विद्वान सुख–दुःख, हर्ष–शोक इत्यादि में समान भाव प्राप्त करते हैं–

'जितेन्द्रिय महानेष स्वदारेष्वस्ति तोषवान्।
राजन्निरीक्ष्यतामित्थं गृहच्छिद्रं परीक्ष्यताम्।।'

इसी प्रकार अन्य अनेकों घटनाक्रमों के माध्यम से ब्रह्मचर्य व्रत का माहात्म्य और शील की सर्वोच्चता दिखाना ही ग्रन्थकार का प्रमुख लक्ष्य है। इसी उद्देश्य को लेकर ही सुदशर्नोदय की रचना हुई है।

वरांग चरित –

संस्कृत जैन महाकाव्यों में सर्वप्रथम महाकाव्य जटासिंहनन्दि द्वारा रचित–चरित नामक चरितप्रधान महाकाव्य है। यह कृति आठवीं शती के पूर्वार्ध की है। इसमें 31 सर्ग हैं। इसमें बहुनायकत्व है। इसमें बाईसवें तीर्थकर नेमिनाथ तथा श्रीकृष्ण के समकालीन वरांग नामक साधु पुरुष का पुण्यमय जीवन अंकित है। महाकाव्य के लगभग सभी लक्षण इस कृति से अनुस्यूत हैं। वरांग का प्रभामण्डित समग्र जीवन इतना लोकप्रिय हुआ कि बाद में अनेक कवियों ने भी इस चरित्र पर विशाल प्रबन्ध लिखे। वीर, क्रृंगार एवं शान्त रसों से परिपूर्ण यह काव्य अश्वघोष के बुद्धचरित के समकक्ष सिद्ध होता है। इस काव्य के रचयिता पर वाल्मीकि रामायण और अश्वघोषकृत बुद्धचरित का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। प्रस्तुत काव्य में कवि की सूक्ष्म दृष्टि एवं विशद वर्णन की क्षमता अत्यन्त भव्य शैली एवं प्रांजल भाषा द्वारा व्यक्त है।

वराबचरित का नायक जन्म से राजपुत्र था। उसका जीवन अपार शक्तिशाली एवं साधुतापूर्ण कार्यों का महासमुद्र है। वह अपराजेय रहकर भी आमरण दूसरों के हितार्थ ही जीवित रहा। वराब के चरित्र का प्रत्येक अंश अत्यन्त प्रभावक है। वराब एक बालक के रूप में, युवा गृहस्थ के रूप में, योद्धा के रूप में, शासक के रूप में एवं अन्ततः एक तपस्वी के रूप में अत्यन्त आदर्श नायक है। महाकवि जयसिंह नन्दी के वराबचरित का आधार ग्रहण कर ही वर्तमान कवि ने प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना की। कवि ने आरम्भ में स्वयं लिखा है–

नरेलरैर्या कथिता कथावरा, वराबराजस्य सविस्तरं पुरा।
मयापि संक्षिप्य च सैव वर्ण्यते, सुकाव्य–बन्धेन सुबुद्धिवर्धनी।।

कथानक परम्परा–गृहीत होने पर भी पर्याप्त मौलिक उद्भावनाओं से ओत–प्रोत है। वर्णनशैली भी अत्यन्त मौलिक है।

चन्द्रप्रभचरितम् –

चन्द्रप्रभचरितम् आचार्य प्रवर वीरनन्दीकृत प्रख्यात महाकाव्य है। इस कृति का रचनाकाल दसवीं शती का पूर्वार्द्ध है। चन्द्रप्रभचरितम् में अष्टम तीर्थकर चन्द्रप्रभ का गरिमामय समग्र जीवन चित्रित है। यह काव्य अठारह सर्गों में है। कथावस्तु प्रथम सर्ग से पन्द्रहवें सर्गपर्यन्त चन्द्रप्रभ के अनेकानेक पूर्वभवों का वर्णन अत्यन्त मनोरम शैली में किया गया है। सोलहवें सर्ग में गर्भ–सूचना के साथ ही छप्पन कुमारियों द्वारा गर्भवती रानी की परिचर्या आरम्भ हो गयी। क्रमशः चन्द्रप्रभ के जन्म का वर्णन है।

कवि ने तिलोयपण्णति और उत्तर पुराण से अपने काव्य के कथानक के लिए प्रेरणा प्रकट की है। उत्तर पुराण के मूल कथानक को महाकाव्योचित रूप प्रदान करने के लिए कवि ने विभिन्न प्राकृतिक दृश्यों एवं मानवीय व्यापारों की योजना की है। एक सफल महाकाव्य की सभी विशेषताएँ इस कृति में है।

कवित्व की महनीयता और पदलालित्य की दृष्टि से प्रस्तुत पद्य दृष्टव्य है। अन्धकार सूर्य के काजल के समान चित्रित किया गया है। सर्वथा नयी कल्पना है–

अवमास्य जगद्गृहं करे, रविदीपे विरतिं गते तमः।
प्रसरदहर शनैः शनैरिव तत्कज्जलमम्बरे जनैः।।

बन्ध्या नारी की मनोव्यथा का मर्मस्पर्शी चित्र अनुपम है–

तेनोज्झितां निजकुलैकविभूषणेन सौभाग्यसौरव्य
विभवस्थिरकारणेन।
मां शक्नुवन्ति परितर्पयितुं विपण्यां न ज्ञातयो न सुहृदो न
पतिप्रसादाः ।।

कवि का राजनीतिक कौशल भी दृष्टव्य है–

अभिमानधनोहि विक्रियां न ब्रजति प्रत्युत दण्डदर्शनैः।
प्रशमं न तु याति जातुचित् परिनिर्वाति किमग्निरग्निना।।

अर्थात् दण्ड के प्रयोग से अभिमानी और भी उद्दण्ड हो सकता है। अग्नि से अग्नि शान्त नहीं होती है। शीतल जल से शान्त करना चाहिए।

समग्र काव्य में प्रायः सभी रसों के भरपूर उदाहरण है। माघ एवं भारवि के काव्यों के कवि की काव्यशैली पर पर्याप्त प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। चन्द्रप्रभमहाकाव्य कथागठन, सन्देश एवं शिल्प की दृष्टि से एक श्रेष्ठ महाकाव्य है।

प्रद्युम्नचरित महाकाव्य –

प्रद्युम्नचरित संस्कृत–जैन–महाकाव्य–परम्परा का तृतीय पुष्प है। इसमें कुल चौदह सर्ग हैं। इसके रचयिता महाकवि महासेन है। महासेन दशम शताब्दी के उत्तरार्ध के कवि हैं। इसी काल में प्रस्तुत महाकाव्य रचा गया। प्रद्युम्नचरित भी प्रथम दो काव्यों के समान चरितप्रधान या चरितनामान्त महाकाव्य है।

इरावती नगर में यदुवंशी श्रीकृष्ण राज्य करते थे। इनकी पटरानी सत्यभामा थी, यह परमसुन्दरी थी। नारदमुनि के प्रति उसने आदर–भाव दिखाया। अतः नारद ने प्रयत्न करके परम सुन्दरी रूक्मिणी से श्रीकृष्ण का विवाह करा दिया और सत्यभामा के महत्त्व को न्यून करा दिया। कालान्तर में रूक्मिणी ने एक पुत्र को जन्म दिया। इस पुत्र का नाम प्रद्युम्न रखा गया। जन्म के पाँचवें दिन ही धूमकेतू नामक दैत्य ने प्रद्युम्न का अपहरण किया। बाद में कालशम्बर ने प्रद्युम्न को पुत्रवत् पाला। सोलह वर्ष तक प्रद्युम्न कालशम्बर के घर ही रहा। प्रद्युम्न अत्यन्त पराक्रमी ओर सच्चरित्र

व्यक्ति था। वह सदा विजेता ही रहा। नवम् सर्ग में प्रद्युम्न की माता से भेंट हुई। उदधि–कुमारी से उसने विवाह किया। अनेक युद्ध किये। शौर्य का मानदण्ड स्थापित किया। अन्त में प्रद्युम्न ने तीर्थकर नेमिनाथ से दीक्षा ग्रहण की और घोर तप्ररण करके मोक्ष प्राप्त किया।

जहाँ तक प्रद्युम्नचरित के कथानक के प्रेरणा–स्त्रोतों का प्रश्न है, निश्चित रूप से जिनसेन प्रथम के हरिवंश पुराण और गुणभद्राचार्य के उत्तर पुराण में ये विद्यमान है। हरिवंश पुराण का ही मुख्य प्रभाव है। उत्तर पुराण से तुलना करने पर तो कथा में और घटनाओं में अनेक असमानताएँ भी प्राप्त होती हैं। नामभिन्नता, कंचनमाला के पदबन्ध की भिन्नता। प्रद्युम्न पर शीलभंग का दोष दोनों ग्रन्थों में पर्याप्त भिन्न है। श्रीमद्भागवत और विष्णु पुराण के कथानकों का भी प्रस्तुत कथानक पर प्रभाव पड़ा है। निष्कर्षतः सम्पूर्ण कथानक सुगठित, प्रवाहमय, शक्तिसम्पन्न एवं प्रभावोत्पादक है। अनेक रस एवं अन्तर्कथाएं इस महाकाव्य को विशिष्ट गरिमा प्रदान करती है। काव्य पारिवारिक राजकीय एवं चारित्रिक स्तरों को पार करता हुआ जीवन के चरम पर पहुँचता है। ङ्गृंगार एवं वीरपोषक रस है और शान्त रस अंगी है।

काव्य की श्रेष्ठता के कतिपय उदाहरण प्रस्तुत है–

प्रद्युम्न हरण के समय रूक्मिणी के शोकोद्गार प्रत्येक व्यक्ति को द्रवित करते हैं–

> हा बाल हा कुटिल कुन्तल हा सुनास हा पूर्णचन्द्रमुख हा शतपत्रनेत्र।
> हा कामपाश शम बन्धुर कर्णपाश, हा हारिकम्बुगल हा दृढ़बाहुशीर्ष।।

शान्त रस का वह भाव जिसमें डूबकर प्रद्युम्न विरक्त होता है–

> मैत्री न शत्रती भूभ्यां, संयोगः सविपर्ययः।
> इति ध्यात्वा जनैः कार्य, तपोवननिषेवणम्।।

इस काव्य में संस्कृत के प्रख्यात प्रायः सभी वृत्तों का उपयोग हुआ है। प्रत्येक छन्द पर कवि का असाधारण अधिकार है। अलंकार–योजना एवं भाषा–सौष्ठव भी लोकोत्तर है।

वर्धमानचरितम् –

'वर्धमान चरितम्' नामक प्रसिद्ध महाकाव्य, महाकवि असग द्वारा द''ाम शती के उत्तरार्ध में रचा गया है। इस विशाल काव्य में भगवान महावीर का अनेक पूर्वजन्मों से युक्त लोकोत्तर जीवनवृत्त अठारह सर्गों में दिव्य भव्यता के साथ वर्णित है। सोलह सर्गों में अत्यन्त उदात्त शैली में और अनेक वर्णन–वैभवों की आभा में भगवान वर्धमान में पूर्व जन्मों का वर्णन है। उत्थान–पतन के अनन्त थपेड़ों से जूझता हुआ वर्धमान का चिर संघर्षशील जीवन हमारे मानस–पटल पर एक प्रभावक और स्थायी बिम्ब बना लेता है। सत्रहवाँ सर्ग महाकाव्य का सर्वस्व है। वर्धमान के जन्म से लेकर केवल ज्ञानप्राप्ति तक का प्रायः समस्त जीवन इस सर्ग में अनुस्यूत है। अठारहवें सर्ग में वर्धमान के विभिन्न उपदेशों का वर्णन है और अन्ततः 72 वर्ष की आयु में निर्वाणप्राप्ति का हृदयहारी वर्णन है।

जहाँ तक वर्धमानचरित के कथानक–स्त्रोतों का प्रश्न है, कविवर असग ने एतदर्थ तिलोयपण्मति और उत्तरपुराण से सहायता ली है। अत्यधिक प्रभाव उत्तर पुराण का ही है। पुराण को महाकाव्य का रूप देने में कवि ने अनेक स्थलों को छोड़ा है और अनेक हृदयस्पर्शी स्थलों की योजना की है। कविवर असग में ग्रहणशीलता और मौलिक सृष्टि अपार है। प्रस्तुत ग्रन्थ प्रत्येक दृष्टि से एक सफल महाकाव्य है। स्थालीपुलाकन्यायेन प्रस्तुत काव्य की गरिमा का सन्दर्शक एक संसार की असारता का दिग्दर्शक सजीव उदाहरण प्रस्तुत है–

> जन्म–व्याधि–जरा–वियोग–मरण–व्यावृत्ति–दुःखोदधा–
> वामज्जन्नहमेक एव नितरां सीदामि मे नापरे।।
> विद्यन्ते सुहृदो न चापि रिपवो न ज्ञातयः केवलं।
> धर्मो बन्धुरिहाऽपरत्र च परामित्येकतां चिन्तयेत्।।
> पर्श्वनाथचरितम् –

तेईसवें तीर्थकर पार्श्वनाथ का जीवनवृत्त अत्यधिक लोकप्रिय रहा है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, कन्नड़ एवं हिन्दी में अनेक ग्रन्थ पार्श्वनाथ पर रचे गये हैं। प्रस्तुत महाकाव्य आचार्य वादिराज सूरि द्वारा रचित बारह सर्गमय श्रेष्ठ महाकाव्य है। यह रचना ग्यारहवीं शती के उत्तरार्द्ध की है। वादिराज ने यशोधरचरित, एकीभावस्तोत्र एवं न्यायविन्रिय आदि ग्रन्थों की भी रचना की है।

पार्श्वनाथ चरितम् आरम्भ के आठ सर्गों में पार्श्वनाथ के पूर्व जन्मों का विस्तृत वर्णन है। नवम् सर्ग से द्वादश सर्गपर्यन्त ही नायक का प्रत्यक्ष चरित्र उपस्थित होता है। बाल्यकाल, युवावस्था बालब्रह्मचारीत्व, दीक्षाग्रहण, तप, त्याग और अन्ततः निर्वाण–पदप्राप्ति आदि अनेक वर्णनों और घटनाओं से जीवन परिव्याप्त है।

कवि ने सर्वप्रथम पार्श्वनाथचरित को संस्कृत भाषा में महाकाव्यात्मक रूप प्रदान किया। इससे पूर्व जिनसेन ने 9वीं शती में पार्श्वाभ्युदय की रचना की। इसमें संक्षेप में ही पार्श्वनाथ की जीवनी चित्रित है। अपभ्रंश में 18 सन्धियों में 'पासणाह चरिउ' पद्मकीर्ति द्वारा भी दशम शती के आरम्भ में रचा गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ के सृजन में प्रेरणा–स्त्रोत के रूप में 'पासपाहचरिउ' और तिलोय पण्णत्ति नामक ग्रन्थ मुख्य है। उत्तरपुराण से भी कवि ने पर्याप्त प्रेरणा प्राप्त की है। संस्कृत जैन काव्यों में इस कृति का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसका अंगीरस शान्त है। ङ्गृंगार, वीर, करुण आदि सहायक रस हैं।

अभी तक जिन महाकाव्यों की चर्चा की गयी है वे मूलतः धर्मप्रधान एवं चरित्र प्रधान काव्य है। उनमें काव्य–गुण एवं शास्त्रीयता भी भरपूर है, पर गौण रूप से ही। इन प्रबन्धों के पश्चात् अनेक ऐसे प्रबन्ध भी जैनाचार्यों ने रचे हैं, जो काव्य–गुणों एवं शास्त्रीयता की दृष्टि से भी अपराजेय है। ऐसे काव्यों में प्रमुख धर्मनाथाभ्युदय, नेमिनिर्वाण, जयन्तविजय और नर–नारायणानन्द है।

धर्मनाथाभ्युदयम् – इस महाकाव्य में 15वें तीर्थकर धर्मनाथ का जीवनचरित्र वर्णित है। यह 21 सर्गों में विभक्त है। इस महाकाव्य के रचयिता कवि प्रवर हरिचन्द्र है। इनका स्थिति–काल अत्यन्त विवादास्पद है। सामान्यतया स्वीकृत समय दशम शती है। उत्तरपुराण से उक्त काव्य की मूल कथा ग्रहण की गयी है। नेमिनिर्वाणकाव्यम् पन्द्रह सर्गों का महाकाव्य है। इसमें महाकवि वाग्भट प्रथम ने तीर्थकर नेमिनाथ का विस्तृत जीवनवृत्त प्रस्तुत किया है। यह कृति 12वीं शती की है। कथागठन, वर्णनशैली एवं भाषासौष्ठव आदि की दृष्टि से उत्तम प्रबन्ध काव्य है।

जयन्तविजयम् – अभयदेव सूरिकृत 19 सर्गों का महाकाव्य है। इसका रचनाकाल तेरहतीं शती (1221 ई०) है। इस काव्य की कथा न पौराणिक है और न ऐतिहासिक ही, एक प्रसिद्ध लोककथा ही उसका आधार है। काव्य न जाने कितनी उपकथाओं को मूल कथा में अनुस्यूत किये हुए है। यह काव्य अपार वैविध्य के साथ एक सफल महाकाव्य है। नरनारानन्द महाकाव्य कवि वस्तुपाल द्वारा रचित यह सोलह सर्गों में व्याप्त काव्य है। इसमें अत्यन्त भव्य शैली में श्रीकृष्ण और अर्जुन के चरित्रों का उद्घाटन एवं विस्तार प्रदर्शित है। इस कृति में भी महाकाव्य की पूर्ण गरिमा है। कथा का मूलाकार महाभारत है।

पद्मानन्द महाकाव्य – यह 19 सर्गों का एक श्रेष्ठ पैराणिक महाकाव्य है। इसमें भगवान् ऋषभदेव का जीवन–चरित वर्णित है।

इसके रचयिता कवि प्रवर अमरचन्द्र हैं। इनका समय 14वीं शती है।

भरतेश्वराभ्युदय महाकाव्य – यह आशाधर द्वारा रचित महाकाव्य है। इसमें प्रथम चक्रवर्ती भरत का उदात्त चरित वर्णित किया गया है। इस महाकाव्य के प्रत्येक सर्ग के अन्त में सिद्व शब्द आया है।

पर्श्वनाथचरित महाकाव्य – माणिक्य चन्द्रसूरि की इस रचना का परिमाण छह हजार सात सौ सत्तर श्लोक है। पौराणिक काव्य के अनुरूप इसमें अनुष्टुप छन्दों का ही अधिक प्रयोग किया गया है। इसमें पार्श्वनाथ तीर्थंकर का जीवनवृत्त अंकित है तथा अनेक भवान्तरों तथा अवान्तरों की कथाओं की योजना है।

मल्लिनाथचरित महाकाव्य – यह महाकाव्य विनयचन्द्र सूरि द्वारा रचित है। इसमें मिथिला की राजकुमारी मल्लि का तथा साकेत नृप प्रतिबुद्ध, चम्पा नृत्य चन्द्रच्छाय, आवस्ति नरेश रुक्मी, वाराणसी भूप शंख हस्तिनापुरेश अदीनशत्रु तथा कापिल्यराज जितशत्रु के भवान्तरों का वर्णन प्राप्त होता है। इसमें भी अधिकतर अनुष्टुप छन्द का ही प्रयोग है।

इस प्रकार संस्कृत भाषा में निबद्ध जैन महाकाव्यों की एक सुदीर्घ परम्परा विद्यमान है। यह अधिकांशतः धार्मिक साहित्य ही है तथा जैन मुनियों, आचार्यों तथा श्रावकों द्वारा लिखा गया है। इसमें जैन धर्मों के उपदेशों की विवेचना, जैन मन्दिरों के उत्सव, तीर्थंकरों की महत्ता से सम्बन्धित है। इसके अतिरिक्त इस साहित्य से विविध ऐतिहासिक सूचनाओं का ज्ञान भी होता है। इस प्रकार अत्यन्त विस्तृत अवधि में परिव्याप्त संस्कृत जैन महाकाव्य साहित्य अपने आप में विविध सम्भावनाएँ एवं दिशाएँ समेटे हुए है।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. संस्कृत काव्य के विकास में बीसवीं शताब्दी के जैन मनीषियों का योगदान।
2. जयोदय महाकाव्य परिशीलन
3. आचार्य ज्ञानसागर द्वारा स्मृत साहित्य
4. जैन, बौद्ध और गीता के आचार दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन
5. वीरोदय महाकाव्यम्
6. सुदर्शनोदय महाकाव्यम्